REVIEW OF RESEARCH
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF) UGC APPROVED JOURNAL NO. 48514 ISSN: 2249-894X
VOLUME - 8 | ISSUE - 7 | APRIL - 2019

भारत में किशोरों का आपराधिक दायित्व

डॉ. राज कुमार
सहायक आचार्य, विधि संकाय, लखनऊ विश्वविद्यालय,
लखनऊ (उ.प्र.)

सारांश

भारत में किशोर अपराधियों का वयस्क अपराधियों की तरह विचारण न होने के कारण उनके आपराधिक दायित्व के सम्बन्ध हमेशा प्रश्न उठता रहा है। दिसम्बर 2012 की दिल्ली की सामूहिक बलात्कार की घटना के बाद, जिसमें एक किशोर सहित छः लोगों द्वारा एक युवती पर शारीरिक एवं लैंगिक रूप से निर्दयता पूर्वक आक्रमण हुआ था, घटना में संलग्न अपराधियों को कठोर दण्ड से दण्डित किये जाने की माँग को लेकर पूरे देश में विरोध प्रदर्शन हुआ जिसके परिणामस्वरूप आपराधिक विधि (संशोधन) अधिनियम, 2013 पारित हुआ तथा भारतीय दण्ड संहिता, 1860 की धारा 375 में संशोधन करके बलात्कार की परिधि बढ़ा दी गयी और इसके लिए निर्धारित दण्ड को कठोर कर दिया गया। इसके साथ ही, किशोरों से सम्बन्धित विधि में संशोधन किया गया क्योंकि दिल्ली की सामूहिक बलात्कार की घटना में एक किशोर भी सम्मिलित था, तथा ''किशोर न्याय (बालकों की देख–भाल तथा संरक्षण) अधिनियम, 2015'' पारित हुआ। प्रस्तुत शोध–पत्र में सम्बन्धित विषय के विभिन्न पहलुओं की आलोचनात्मक विवेचना की गयी है।

भूमिका

किशोर का तात्पर्य एक युवा व्यक्ति से है जो वयस्क नहीं है। बालक, बाल, अवयस्क, अल्पवय तथा नवयुवक शब्द एक दूसरे के पर्यायवाची हैं। सामान्यतया 18 वर्ष की आयु तक कोई व्यक्ति अवयस्क मान जाता है। किन्तु, वयस्कता की आयु अलग–अलग सन्दर्भों में अलग–अलग होती है जो कि दायित्व की प्रकृति एवं व्यक्ति की मानसिक, भावनात्मक एवं शारीरिक परिपक्वता पर निर्भर करती है। उदाहरण के लिए बाल श्रम (प्रतिषेध एवं विनियमन) अधिनियम, 1986, जो कि खतरनाक रोजगारों में बालकों की नियुक्ति को प्रतिषिद्ध करने के लिए बनाया गया है, की धारा 2 (ii) के अन्तर्गत 14 वर्ष तक की उम्र के व्यक्ति को बालक (अवयस्क) माना गया है; जबकि हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 5 (iii) एवं विशिष्ट विवाह अधिनियम, 1954 की धारा 4(C) के अन्तर्गत वैध विवाह के लिए एक पुरुष 21 वर्ष की आयु तथा एक स्त्री 18 वर्ष की आयु प्राप्त कर लेने के बाद वयस्क माने जाते हैं। किशोर अपराधी ''किशोर न्याय (बालकों की देख–भाल एवं संरक्षण) अधिनियम, 2015'' द्वारा शासित होते हैं। किशोर पद इस अधिनियम की धारा 2(12) में परिभाषित किया गया है जिसके अनुसार किशोर या बालक का तात्पर्य ऐसे व्यक्ति से है जिसने 18 वर्ष की आयु पूरी नहीं की है।

किशोर अपराधियों का विचारण

अठारहवीं शताब्दी के अन्त तक किशोर अपराधियों के साथ वयस्क अपराधियों की तरह व्यवहार किया जाता था। उन पर अभियोजन आपराधिक न्यायालयों में चलता था तथा वे अपनी सजा का भुगतान उसी कारावास में करते थे जिसमें वयस्क अपराधी रखे जाते थे। परिणाम यह हुआ कि कारावास बुराइयों का केन्द्र बन जाते थे तथा किशोरों में सुधार की सम्भावना समाप्त हो जाती थी[1]। समयान्तराल में यह अनुभव किया गया

कि एक निश्चित आयु तक किशोर आपराधिक मानसिकता रखने में सक्षम नहीं होते हैं। परिणामस्वरूप आपराधिक न्याय व्यवस्था में सुधार के लिए प्रयास किया गया जिससे कि किशोर अपराधियों के साथ न्याय हो सके। किशोर अपराधियों के प्रति होने वाली नृशंसता के विरुद्ध चलाये गये सुधार आन्दोलन का परिणाम यह हुआ कि उन्हें 1772 में सिविल मामलों कुछ विशेष रियायतें प्रदान हुईं तथा बाद में वे रियायतें आपराधिक मामलों में भी प्रदान होने लगीं[2]।

किशोरों द्वारा होने वाले अपराधों के लिए उत्तरदायी सामाजिक, मनोवैज्ञानिक एवं आर्थिक तथ्यों तथा उनके व्यक्तित्व के समग्र विकास के लिए आवश्यक उनके मानसिक, शारीरिक एवं नैतिक विकास की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए किशोरों के अपराधों के विचारण हेतु एक अलग आपराधिक न्याय व्यवस्था की स्थापना के लिए विश्व स्तर पर प्रयास हुआ। परिणामस्वरूप जो व्यवस्था उभर कर सामने आयी उसे ''किशोर न्याय व्यवस्था'' नाम दिया गया जिसमें किशोरों द्वारा होने वाले अपराधों को ''किशोर अपचारिता'', किशोर अपराधियों को ''किशोर अपचारी'' तथा उनके द्वारा होने वाले अपराधों का विचारण करने वाले न्यायालयों को ''किशोर न्यायालय'' कहा जाता है। किशोर अपराधियों को कारावास में नहीं बल्कि एक गृह में रखा जाता है जो सामान्यतया सुधार गृह, किशोर गृह या पर्यवेक्षण गृह इत्यादि नामों से जाना जाता है। सुधार गृह में रहने के दौरान किशोरों के पुनर्वास एवं पुनः सामाजिक एकीकरण के लिए प्रयास किया जाता है जिससे कि वे एक अच्छे एवं स्वावलंबी नागरिक बन सकें।

भारत में किशोर अपराधियों के सुधार के लिए किया गया प्रयास

कारागार समिति 1919–20 ने किशोर अपराधियों के सुधार के लिए विभिन्न मानकों की सिपारिश की जिसके अनुसरण में विभिन्न राज्यों द्वारा किशोर अपराधियों के विचारण हेतु बालक अधिनियम पारित किया गया[3]। उनको शिक्षा एवं औद्योगिक प्रशिक्षण देने के उद्देश्य से बाल–अपराधी बंदी सुधार विद्यालय अधिनियम (Borstal School Act) पारित हुए[4]। केन्द्र शासित प्रदेशों में किशोरों को शासित करने के लिए बालक अधिनियम, 1960 बना।

बाद में, किशोर अपराधियों से सम्बन्धित विधि के पुनर्विलोकन से यह बात सामने आयी कि किशोर अपराधियों से जुड़ी समस्याओं का निदान करने में वर्तमान विधियाँ सक्षम नहीं हैं तथा उनकी समस्याओं के निदान के लिए एक समान विधि की आवश्यकता है। परिणामस्वरूप किशोर न्याय अधिनियम, 1986 पारित हुआ जो जम्मू एवं काश्मीर राज्य को छोड़कर शेष सम्पूर्ण भारत में समान रूप से लागू होता था तथा इस अधिनियम द्वारा किशोरों से सम्बन्धित सभी विधियाँ निरसित कर दी गयीं। यह अधिनियम किशोर न्याय प्रशासन से सम्बन्धित संयुक्त राष्ट्र के मानक नियमों के अनुरूप था। इस अधिनियम की धारा 2(h) के अन्तर्गत एक लड़का 16 वर्ष की आयु तक तथा एक लड़की 18 वर्ष की आयु तक किशोर माने जाते थे।

किशोर न्याय अधिनियम, 1986 को किशोर न्याय (बालकों की देख–भाल एवं संरक्षण) अधिनियम, 2000 द्वारा निरसित कर दिया गया क्योंकि किशोरों के अधिकारों एवं उनके संरक्षण से संबंधित संयुक्त राष्ट्र के विभिन्न अभिसमयों (Conventions) एवं नियमों के परिपेक्ष्य में किशोरों को शासित करने वाली वर्तमान विधि को पुनः अधिनियमित करने की आवश्यकता हो गयी थी। किशोर न्याय (बालकों की देख–भाल एवं संरक्षण) अधिनियम, 2000 (इसके पश्चात 2000 के अधिनियम के रूप में सन्दर्भित) की धारा 2(l) के अन्तर्गत किशोर अपचारी (Deliquent Juvenile) के स्थान पर ''विधि से द्वन्द्व के अधीन किशोर'' (Juvenile in conflict with law) अभिव्यक्ति का प्रयोग हुआ। उपेक्षित किशोर (Neglected Juvenile) के स्थान पर ''देख–भाल एवं संरक्षण का जरुरतमंद किशोर'' (Child in need of care and protection) अभिव्यक्ति का प्रयोग धारा 2(d) के अन्तर्गत किया गया तथा धारा 2(k) के अन्तर्गत लड़के एवं लड़की दोनों के लिए किशोरावस्था की आयु 18 वर्ष कर दी गयी। इस अधिनियम के अन्तर्गत किशोर न्याय परिषद किशोर न्यायालय के रूप में काम करता था तथा किसी अपराध के करने का दोषी पाये जाने पर किशोर अपराधियों को सुधार के लिए विशेष गृह (Special home) भेज दिया जाता था। किसी अपराध के करने का दोषी पाये जाने पर, चाहे अपराध कितना ही गम्भीर क्यों न हो, केवल कुछ आदेश धारा 15 के अन्तर्गत किशोर के सन्दर्भ में जारी किये जा सकते थे जो कि उनके सुधार से सम्बन्धित थे। दण्डात्मक कार्यवाही के रूप में धारा 15(1)(d) के अन्तर्गत किशोर को केवल कुछ जुर्माना अदा करने का आदेश दिया जा सकता था यदि वे 14 वर्ष से ऊपर की आयु के हों तथा धनार्जन किये हों अथवा

धारा 15(1)(g) के अन्तर्गत उन्हें 3 वर्ष के लिए विशेष गृह भेजने का आदेश जारी किया जा सकता था जो कि उनके सुधार के लिए था। किन्तु, धारा 16 के अनुसार किशोरों को किसी अपराध के लिए मृत्युदण्ड या किसी अवधि के कारावास के दण्ड से दण्डित नहीं किया जा सकता था जो कि अन्य विधि में उसी अपराध के लिए हो सकता था।

दिल्ली की सामूहिक बलात्कार की घटना के बाद चले आन्दोलन के फलस्वरूप किशोर न्याय (बालकों की देख–भाल एवं संरक्षण) अधिनियम, 2015 पारित हुआ तथा 2000 का अधिनियम निरसित कर दिया गया क्योंकि उसमें किशोरों को उस तरह दण्डित करने का प्रावधान नहीं था जिस तरह वयस्कों को दण्डित करने का होता है चाहे भले हि वे वयस्कों की तरह अपराध किये हों।

किशोर अपराधियों को शासित करने वाली उपयुक्त विधि के लिए न्यायालय द्वारा किया गया प्रयास

दिल्ली की सामूहिक बलात्कार की घटना के बाद चले आन्दोलन के फलस्वरूप आपराधिक विधि (संशोधन) अधिनियम, 2013 पारित करके आपराधिक विधि में तो संशोधन कर दिया गया किन्तु, किशोरों को शासित करने वाले 2000 के अधिनियम में तुरन्त कोई संशोधन नहीं हुआ। परिणामस्वरूप किशोरावस्था की आयु को कम करने के लिए उच्चतम न्यायालय में याचिकायें दाखिल की गयीं[6] तथा यह प्रतिवाद किया गया कि 18 वर्ष से कम आयु के किशोरों द्वारा किये जाने वाली आपराधिक गतिविधियाँ तेजी से बढ़ रहीं हैं जो कि एक चिन्ता का विषय हैं[7]। इस सन्दर्भ में यह भी बात उठी कि भारतीय आपराधिक न्याय व्यवस्था में अपराधिकता की आयु 12 वर्ष है अर्थात् 12 वर्ष से अधिक आयु का व्यक्ति अपराध कारित करने के लिए सक्षम माना जाता है[7]।

न्यायालय ने इस वाद में कोई उपचार देने से इस आधार पर इन्कार कर दिया कि 2000 का अधिनियम संविधान एवं संयुक्त राष्ट्र के विभिन्न अभिसमयों एवं उद्घोषणाओं के अनुसार है तथा न्यायालय इस अधिनियम के उपबंधों के साथ तब तक हस्तक्षेप नहीं कर सकता जब तक कि किशोरों द्वारा किये गये आपराधिक कृत्य का पर्याप्त आंकड़ा (Data) उपलब्ध न हो[8]। किन्तु, न्यायालय ने यह स्वीकार किया कि 16 से 18 वर्ष की आयु के किशोरों द्वारा होने वाले आपराधिक कृत्यों में हुई बढ़ोत्तरी से इन्कार नहीं किया जा सकता[9]।

तदोपरान्त, उच्चतम न्यायालय में पुनः याचिकायें दाखिल की गयी[10] तथा यह प्रतिवाद किया गया कि किशोरावस्था (Juvenility) के परीक्षण की वास्तविक कसौटी आयु नहीं बल्कि अपराधी की मानसिक परिपक्वता का स्तर है[11]। इस प्रतिवाद का औचित्य इस आधार पर सिद्ध किया गया कि भारतीय दण्ड संहिता, 1860 की धारा 82 के प्रावधान के अनुसार 7 वर्ष से कम आयु का व्यक्ति आपराधिक रूप से उत्तरदायी नहीं माना जा सकता जबकि धारा 83 के प्रावधान के अनुसार 7 वर्ष से 12 वर्ष की आयु का व्यक्ति आपराधिक रूप से उत्तरदायी ठहराया जा सकता है यदि वह आपराधिक कृत्य करते समय अपने काम की प्रकृति एवं उसके परिणाम को समझने की मानसिक क्षमता रखता है[12]।

किन्तु, इस बार भी न्यायालय ने किशोरावस्था की आयु को कम करने के लिए 2000 के अधिनियम में संशोधन हेतु आदेश देने से इन्कार कर दिया[13]। यद्यपि कि न्यायालय ने किशोरावस्था की आयु को कम किये जाने की आवश्यकता महसूस की किन्तु, मामले को विधायिका द्वारा सुलझाये जाने के लिए छोड़ दिया[14]।

तदोपरान्त, एक 40 वर्ष के व्यक्ति के हत्या के लिए दोषसिद्धि के मामले को सुनते हुए न्यायालय ने किशोर विधि को कुछ ज्यादा ही उदार माना क्योंकि वह व्यक्ति इस आधार पर आपराधिक दायित्व से मुक्त हो गया कि अपराध करते समय वह 16 वर्ष की आयु का था[15] तथा 2000 के अधिनियम पर पुनर्विचार हेतु सरकार की सलाह देने के लिए एटार्नी जनरल से कहा जिससे कि इस विषय पर विधि समाज की अपेक्षा को पूरी कर सके[16]।

एक अन्य वाद में भी 7 वर्ष की एक लड़की के बलात्कार एवं उसकी हत्या के मामले में आजीवन कारावास की सजा प्राप्त व्यक्ति उच्चतम न्यायालय से इस आधार पर छूट गया कि अपराध करते समय वह किशोर था[17]।

अन्ततः 6 अप्रैल 2015 को एक हत्या के अभियुक्त का मामला सुनते हुए, जिसमें यह दावा किया गया कि हत्या करते समय अभियुक्त 18 वर्ष से कम आयु का था, उच्चतम न्यायालय ने सरकार से 2000 के अधिनियम पर पुनर्विचार करने के लिए कहा जिससे कि बलात्कार एवं हत्या जैसे गम्भीर अपराध का अभियुक्त किशोर न छूट सके[18]।

परिणामस्वरूप किशोर न्याय (बालकों की देख–भाल एवं संरक्षण) अधिनियम, 2015 पारित हुआ जिसमें 2000 के अधिनियम में प्रयुक्त सभी पद उसी रूप में अपनाये गये तथा 2000 के अधिनियम की लगभग सभी व्यवस्था इस अधिनियम में भी अपनायी गयी किन्तु 16 वर्ष से 18 वर्ष की आयु के किशोरों को अपराध के लिए उत्तरदायी ठहराने की भी व्यवस्था की गयी यदि वे एक वयस्क की तरह अपराध किये हों।

2015 के अधिनियम के अन्तर्गत किशोरों का आपराधिक दायित्व

किशोर न्याय (बालकों की देख–भाल एवं संरक्षण) अधिनियम, 2015 की धारा 15 के अनुसार 16 से 18 वर्ष की आयु के किशोरों द्वारा कारित गम्भीर अपराध के मामलों में किशोर न्याय परिषद यह निर्धारित करेगा कि क्या अपराध एक किशोर के रूप में किया गया है अथवा एक वयस्क के रूप में। इस निर्धारण के बाद मामले का विचारण एक किशोर की तरह 2015 के अधिनियम के अनुसार होगा यदि अपराध एक किशोर के रूप में कारित हुआ हो तथा एक वयस्क की तरह सक्षम न्यायालय में होगा यदि अपराध एक वयस्क के रूप में कारित हुआ हो।

विभिन्न देशों में स्थिति

यूनाइटेड किंगडम में 10 वर्ष से 18 वर्ष तक की आयु के किशोरों को अपराध कारित करने में सक्षम माना जाता है किन्तु उनका विचारण सामान्यतया युवा न्यायालय में होता है यदि उनके द्वारा बलात्कार या नरसंहार जैसा गम्भीर अपराध कारित न हुआ हो[19]। संयुक्त राज्य अमेरिका में वयस्कता की परम्परागत आयु 18 वर्ष है किन्तु अधिकांश प्रान्तों में 18 वर्ष से कम आयु के किशोरों का विचारण वयस्कों की तरह होता है[20]। कनाडा में 12 से 18 वर्ष की आयु के व्यक्ति को युवा माना जाता है तथा युवा न्याय न्यायालय द्वारा उन्हें वयस्कों की तरह दण्डित किया जाता है[21]।

आलोचनात्मक मूल्यांकन

उपरोक्त विवेचना की दृष्टि में यह कहा जा सकता है कि किशोरों को शासित करने वाला वर्तमान किशोर न्याय (बालकों की देख–भाल एवं संरक्षण) अधिनियम, 2015 उपयुक्त एवं न्यायोचित है क्योंकि महिलाओं एवं लड़कियों को गम्भीर अपराधों से सुरक्षा प्रदान करना उतना ही महत्वपूर्ण है जितना कि किशोर अपराधियों की देख–भाल, संरक्षण एवं उनका पुनर्वास। समयान्तराल में, विज्ञान एवं तकनीक ने किशोरों की परिपक्वता को भी प्रभावित किया है तथा किशारों द्वारा कारित गम्भीर अपराधों से समाज के अन्य वर्ग की सुरक्षा के लिए विधिक भय अपरिहार्य हो गया है। अतः कहा जा सकता है कि वर्तमान किशोर न्याय से सम्बन्धित विधि समाज की आवश्यकता के अनुरूप है।

सन्दर्भ

1. एन.वी. परांजपे, क्रिमिनालाजी एवं पेनालाजी, 14वाँ संस्करण, 2009 सेन्ट्रल ला पब्लिकेशन, पृष्ठ 528.
2. इरे बनाम शेफटेसबरी (1772) 24 ER 659, पूर्वोक्त संदर्भ संख्या 1 में पृष्ठ संख्या 528 पद उद्धृत.
3. एस.एस. श्रीवास्तव, क्रिमिनालाजी एवं क्रिमिनल एडमिनिस्ट्रेशन, तृतीय संस्करण 2007, सेन्ट्रल ला एजेन्सी, पृष्ठ 325 एवं संदर्भ संख्या 1 पृष्ठ 540.
4. संदर्भ संख्या 3 पृष्ठ 323.
5. सलिल बाली बनाम भारत संघ, उच्चतम न्यायालय 17 जुलाई 2013.
6. तत्रैव पैरा 8.
7. तत्रैव पैरा 4 में दिया गया भारतीय दण्ड संहिता, 1860 की धारा 83 का उद्धरण.
8. तत्रैव पैरा 49.
9. तत्रैव पैरा 48.
10. डॉ. सुब्रामनियम स्वामी बनाम राजू थ्रू मेम्बर ज्वेनाइल जस्टिस बोर्ड, उच्चतम न्यायालय, 28 मार्च 2014.
11. तत्रैव पैरा 13.
12. तत्रैव पैरा 13.

13. तत्रैव पैरा 42.
14. तत्रैव पैरा 48.
15. दि हिन्दू, 21 नवम्बर 2014 पृष्ठ 8.
16. तत्रैव मुख्य पृष्ठ.
17. दि हिन्दू, 11 जनवरी 2015 पृष्ठ 9.
18. दि हिन्दू, 7 अप्रैल 2015 मुख्य पृष्ठ.
19. पूर्वोक्त संदर्भ संख्या 10 पैरा 31.
20. तत्रैव पैरा 32.
21. तत्रैव पैरा 30.

डॉ. राज कुमार
सहायक आचार्य, विधि संकाय, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ (उ.प्र.)

LBP PUBLICATION